अरस्तू

प्रत्ययवादी दार्शनिक

ग्रंथ - 1. तर्कशास्त्र
2. पॉलिटिक्स
3. थियोलॉजी
4. ऑन क्रियेशन एंड डेस्ट्रक्शन

अरस्तू प्लेटो के शिष्य थे। कुछ बातों में इनमें समानता भी है तथा कुछ बातों में विरोध भी है। दोनों ही प्रत्ययवादी दार्शनिक हैं तथा प्रत्ययात्मक ज्ञान को ही वास्तविक ज्ञान मानते हैं। दोनों ही ज्ञान को बुद्धि द्वारा प्राप्त मानते हैं। लेकिन ज्ञान और अनुभव में दोनों ने पर्याप्त अन्तर माना है।

कारण सिद्धान्त

अरस्तू के दर्शन को भलीभाँति समझने के लिए उनके कारण सिद्धांत को समझना आवश्यक है। यह कारण सिद्धांत पर्याप्त व्यापक एवं मौलिक है तथा उनके दर्शन की आधारशिला है।

सर्वप्रथम अरस्तू ने कारण और प्रयोजन में अन्तर स्पष्ट किया।

कारण और प्रयोजन → अरस्तू के अनुसार किसी घटना का कारण वह साधन होता है जिसके द्वारा वह घटना घटित होती है। अतः कारण के द्वारा हमें 'कैसे' का ज्ञान होता है।

प्रयोजन घटना के उद्देश्य की व्याख्या करता है कि वह घटना 'क्यों' घटित हुई। प्रयोजन का उत्तर हमें युक्ति द्वारा प्राप्त होता है।

उदाहरण → किसी व्यक्ति की मृत्यु का कारण रोग, दुर्घटना कुछ भी हो सकता है, लेकिन यह उसकी मृत्यु का प्रयोजन नहीं है।

अरस्तू ने अपने कारण सिद्धांत में कारण और प्रयोजन दोनों को सम्मिलित किया है अतः यह सिद्धांत अधिक व्यापक है। अरस्तू कहते हैं कि किसी घटना की व्याख्या के लिए हमें उसके कारण और प्रयोजन दोनों को जानना आवश्यक है।

प्रत्येक घटना के चार कारण होते हैं → अरस्तू ने किसी घटना के लिए चार कारणों को आवश्यक माना है। ये चारों कारण किसी वस्तु की उत्पत्ति में या किसी घटना के घटित होने में एक साथ कार्य करते हैं, पहले या बाद के क्रम में नहीं। ये चारों एक साथ मिलकर ही पूरी घटना को सम्पन्न करते हैं।

अरस्तू ने कहा कि ऐसा नहीं है कि किसी घटना में कोई कारण काम करे और किसी दूसरी घटना में अन्य कारण। प्रत्येक घटना के लिए इन चारों कारणों का होना आवश्यक है।

1. उपादान कारण → किसी वस्तु का उपादान कारण वह पदार्थ या सामग्री है जिससे वह वस्तु बनती है अर्थात् वह सामग्री ही वस्तु का रूप ले लेती है। जैसे - घड़े के निर्माण के लिए मिट्टी उपादान कारण है जो बाद में घड़े का रूप

ले लेती है। तेल के लिए तिल, दही के लिए दूध, रोटी के लिए आटा - ये सभी इनके उपादान कारण हैं।

2. निमित्त कारण → किसी भी कार्य या वस्तु की उत्पत्ति या निर्माण में गति एवं परिवर्तन अवश्य होता है तथा इसके लिए किसी चेतन शक्ति की आवश्यकता होती है। यही चेतन शक्ति निमित्त कारण है जिसे शक्त कारण या चालक शक्ति भी कहते हैं। जैसे घड़े के निर्माण में कुम्हार निमित्त कारण है जो घटना को गति देता है।

परिवर्तन का अर्थ वस्तु का स्वभाव परिवर्तन है जो चेतन सत्ता ही कर सकती है। जैसे मिट्टी का घड़े के रूप में रूपान्तरण कुम्हार ही कर सकता है। यही निमित्त कारण है।

3. स्वरूप कारण → यह वस्तु का मानसिक विचार, सार या प्रत्यय होता है, जिसका निर्माण करना है। इसी प्रत्यय या स्वरूप को ध्यान में रखकर वस्तु का निर्माण होता है। जैसे घड़े के निर्माण में कुम्हार के मस्तिष्क में जो घड़े का स्वरूप या मानसिक विचार है, वही स्वरूप कारण है.

4. लक्ष्य कारण → वह उद्देश्य, जिससे प्रेरित होकर सम्पूर्ण घटनाक्रम संभव होता है, लक्ष्य कारण कहलाता है। जैसे - कुम्हार के मस्तिष्क में घड़े के निर्माण का जो उद्देश्य है, वही उसका लक्ष्य कारण है।

इस प्रकार अरस्तू ने दर्शन के इतिहास में पहली बार इन चारों कारणों के औचित्य को

सिद्ध किया है। इनकी आवश्यकता, अनिवार्यता और महत्त्व को प्रतिपादित किया है।

द्रव्य और आकार

अरस्तू ने जगत् की व्याख्या द्रव्य और आकार इन दो तत्त्वों से की है। उनके अनुसार प्रत्येक वस्तु का लक्ष्य अपने आकार को अभिव्यक्त करना है। संपूर्ण जगत् द्रव्य से आकार की ओर बढ़ रहा है, यही विकास है, परिवर्तन है, गति है।

अरस्तू भी प्रत्यय या सामान्य को ही एकमात्र सत्ता मानते हैं किन्तु वह वस्तु में ही रहता है, वस्तु से अलग नहीं। सामान्य और विशेष एक दूसरे पर आश्रित है। एक के अभाव में दूसरे की कल्पना भी नहीं की जा सकती। जैसे मनुष्य को मनुष्यत्व से अलग नहीं किया जा सकता।

1. द्रव्य सामान्य है, आकार विशेष → अरस्तू के अनुसार द्रव्य वस्तु का अनिवार्य तत्त्व है तथा आकार उसकी विशेषता या पहचान है। आकार ग्रहण करके ही वह वस्तु मूर्त रूप ग्रहण करती है।

2. द्रव्य और आकार अपृथक् हैं → अरस्तू कहते हैं कि विश्व की प्रत्येक वस्तु द्रव्य और आकार का मिश्रण है। द्रव्य उसकी अन्तर्वस्तु है और आकार उसका स्वरूप है। इन दोनों को अलग करना संभव नहीं है।

3. पृथक्करण चिन्तनीय है → अरस्तू कहते हैं कि वैचारिक

दृष्टि से द्रव्य और आकार को अलग सोचा जा सकता है, लेकिन वास्तव में इन्हें अलग नहीं माना जा सकता।

4. आकार और आकृति में अंतर है → अरस्तू कहते हैं कि आकृति बाह्य रूप होता है, लेकिन आकार में वस्तु के सम्पूर्ण संगठन का बोध होता है। आकार में उस वस्तु की अनिवार्य कार्यक्षमता भी शामिल है, जैसे हाथ के आकार में किसी चीज़ को पकड़ने की शक्ति शामिल है। यदि यह क्षमता समाप्त हो जाए तो आकार का सर्वश्रेष्ठ अंश समाप्त हो जाता है। स्पष्ट है कि आकार में आकृति के साथ बहुत कुछ अन्य भी शामिल है।

5. द्रव्य और आकार में संबंध → अरस्तू कहते हैं कि द्रव्य स्वयं निराकार है तथा सभी वस्तुओं में व्याप्त है। द्रव्य स्वयं निर्विशेष और निर्गुण है, आकार से ही उसे विशेषता और गुण मिलते हैं। आकार ग्रहण करके ही द्रव्य वस्तु बनता है।

6. द्रव्य संभाव्यता है, आकार वास्तविकता → अरस्तू कहते हैं कि द्रव्य में असंख्य संभावनाएँ होती हैं और आकार ग्रहण करने के बाद ही वह अपने वास्तविक रूप में आता है। जैसे - मिट्टी में अनेक चीजें बनने की संभावनाएँ हैं तथा घड़ा या दीपक बनने के बाद ही वह वास्तविक आकार में आता है।

7. द्रव्य और आकार सापेक्ष हैं → अरस्तू के अनुसार एक ही वस्तु हमेशा द्रव्य या आकार नहीं हो सकती, वह एक समय में द्रव्य तथा दूसरे समय में आकार भी हो सकती है। जैसे - लकड़ी वृक्ष की दृष्टि से आकार लेकिन मेज की दृष्टि से द्रव्य है।

8. **परिवर्तन की व्याख्या** - अरस्तू के अनुसार द्रव्य, आकार को ग्रहण करता है। इस प्रकार समय की दृष्टि से द्रव्य पहले, पर विचार की दृष्टि से आकार पहले होता है। विश्व में सभी प्रकार के परिवर्तन और गति द्रव्य से आकार की ओर जाना है। द्रव्य का आकार में रूपान्तरण ही परिवर्तन है। द्रव्य में गति होती है, आकार स्थिर होता है।

9. **निम्नतम व उच्चतम दोनों अवस्थाएँ वैचारिक हैं** - अरस्तू कहते हैं कि विकास की श्रृंखला में निम्नतम स्थिति आकारहीन द्रव्य है तथा उच्चतम स्थिति द्रव्यहीन आकार है। लेकिन चूँकि द्रव्य और आकार कभी अलग नहीं रह सकते अतः ये दोनों ही स्थितियाँ वैचारिक हैं, वास्तविक नहीं।

10. **विकासवाद का जनक** - पाश्चात्य दर्शन में अरस्तू को विकासवाद का जनक कहा जाता है, जिसके अनुसार यह जगत द्रव्य का आकार में विकसित होना है। अधिक आकार वाला अधिक विकसित कहलाता है।

ईश्वर

जगत् की व्याख्या के लिए अरस्तू ने दो सत्ताएं मानी हैं - द्रव्य और आकार। जगत् का विकास द्रव्य से आकार की ओर हो रहा है। जगत् निरन्तर विकासशील है।

विकास के क्रम में जो सत्ता जितना अधिक आकार को अभिव्यक्त करती है वह उतनी ही उच्च है। विकास की इस शृंखला में सबसे उच्चतम सत्ता ईश्वर है, जिसमें केवल आकार है, द्रव्य नहीं है। अतः अरस्तू ने ईश्वर को शुद्ध आकार कहा है।

1. ईश्वर विकास की पराकाष्ठा है - अरस्तू कहते हैं कि जगत् विकास की शृंखला है और विकास की चरम सीमा ईश्वर है, जो नित्य तथा शाश्वत है। इसमें आगे विकास की कोई संभावना नहीं, यह विकास की चरम सीमा है तथा शुद्ध सत्ता है।

2. ईश्वर जगत् का स्वरुप कारण है - स्वरुप कारण वह आदर्श प्रत्यय होता है जिसके अनुसार किसी वस्तु की रचना होती है। अतः जगत् की रचना के लिए ईश्वर ही वह आदर्श प्रत्यय है जो जगत् के रुप में साकार होता है।

3. ईश्वर जगत् का उपादान कारण है - उपादान कारण वह कच्ची सामग्री होती है जिससे वस्तु का निर्माण होता है। अतः ईश्वर ही वह सामग्री है जिससे जगत् का निर्माण होता

ईश्वर संपूर्ण जगत में व्याप्त है।
है। इसीलिए

4. ईश्वर जगत का निमित्त कारण है → कारण का कार्य के रूप में परिवर्तन करने वाली तथा निर्माण प्रक्रिया को गति देने वाली चेतन सत्ता निमित्त कारण होती है। अरस्तू कहते हैं कि जगत के विकास की प्रक्रिया का प्रवर्तक या गति देने वाला ईश्वर है।

5. ईश्वर जगत का लक्ष्य कारण है → विकास की प्रक्रिया में किसी आदर्श को लक्ष्य बनाया जाता है जिसकी ओर सारी प्रक्रिया अनुसरित होती है। ईश्वर में जगत के समस्त गुणों और विशेषताओं की पूर्ण अभिव्यक्ति है। अतः ईश्वर ही जगत का लक्ष्य कारण है।

6. ईश्वर गतिहीन गतिदाता है → अरस्तू के अनुसार ईश्वर संपूर्ण विकास की प्रक्रिया को गति देने वाला है लेकिन स्वयं गतिहीन है क्योंकि ईश्वर में द्रव्य नहीं है और गति द्रव्य में ही होती है।

7. ईश्वर आकारों का आकार है → अरस्तू कहते हैं कि ईश्वर शुद्ध आकार है अर्थात केवल आकार है और इसीलिए वह पूर्ण विकसित सत्ता है। ईश्वर को द्रव्यहीन आकार कहा गया है।

ईश्वर आनन्द रूप है → ईश्वर पूर्ण है, विकास का सर्वोच्च बिंदु है, अतः

स्वाभाविक रूप से वह आनन्दरूप है।

9. ईश्वर पुरुष विशेष नहीं है - अरस्तु के अनुसार शुद्ध, रूपों तथा शुद्ध आकार केवल वैचारिक सत्ताएँ हैं, वास्तविक नहीं। अतः ईश्वर केवल वैचारिक एवं तार्किक सत्ता है, उसका मूर्त अस्तित्व नहीं है। अतः वह पुरुष विशेष नहीं हो सकता।

10. विकास की प्रक्रिया का प्रवर्तक - ईश्वर विचार एवं सत्ता की दृष्टि से जगत की विकास प्रक्रिया का प्रवर्तक है तथा स्वयं सिद्ध है।

आलोचना

1. अरस्तू ने ईश्वर के संबंध में जिस भाषा का प्रयोग किया है वह किसी व्यक्ति विशेष पर ही लागू होती है, किसी वैचारिक सत्ता पर नहीं।

2. अरस्तू ने ईश्वर को आनन्दरूप बताया है। आलोचक कहते हैं कि कोई व्यक्ति ही आनंदयुक्त हो सकता है, कोई वैचारिक या तार्किक सत्ता नहीं।